Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 GISRRJ | Volume 4 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

वेदनित्यत्व विचार

जसवन्त सिंह
शोधछात्र,
श्रीलालबहादुर शास्त्री संस्कृत विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत।

Article Info
Volume 4 Issue 2
Page Number: 80-85
Publication Issue :
March-April-2021
Article History
Accepted : 02 April 2021
Published : 07 April 2021

शोध सारांश

भारतीय मनीषा बिना किसी संकोच के वेदों को स्वत: नित्य स्वीकार करती है। जबकि अन्य सभी ग्रन्थों को अपने को प्रामाणिक करने के लिये अन्य ग्रन्थों की आवश्यकता होती है, परन्तु वेदों को नहीं।

मुख्य शब्द

मनीषा, वेद,नित्य, मानव, ईश्वर, दर्शन।

मानव सभ्यता के उष:काल में प्रागैतिहासिक युगों की धुंधली वेला में वैदिक ज्ञान का प्रकाश सत्यद्रष्टा ऋषियों की प्रकृति से विशुद्ध मानस में हुआ। विश्व की समस्त प्राचीन सभ्यताओं के आविर्भाव से सहस्रों वर्ष सप्त सिन्धव: के इस पावन देश जहाँ गंगा और यमुना का पुनीत जल अनन्तकाल से इन ऋषियों की भूमि को पावन कर रहा है, उससे भी अधिक इस पावन भूमि पर ईशप्रदत्त वेदज्ञान अधिक पावन बना रहा है।

त्रिविष्टप के उच्चतम शिखरों पर उद्भूत होने वाली आर्य संस्कृति का पालन पोषण और उसका अनेक रूपों में विकास हुआ। यह सब विश्व में मानव को उसी संस्कृति की अक्षय देन वेदविद्या के रूप में प्राप्त हुआ। वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है। ईश्वर के नित्य होने से वेदों का भी नित्यत्त्व है। इस मत में वेद, दर्शन, व्याकरणशास्त्र आदि अनेक प्रमाणभूत ग्रन्थ हैं। स्वयम्भू परमपिता परमात्मा ने अपने वेदज्ञान में वेदों के नित्य होने में स्वत: प्रमाण दिया है। यजुर्वेद में कहा है–

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्।

कविर्मनीषी परिभू: स्वयंम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्य: समाभ्य:।।[1]

पदार्थ– हे मनुष्यो! जो ब्रह्म शुक्रम्= शीघ्रकारी सर्वशक्तिमान्, अकायम्= स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीररहित, अव्रणम्= छिद्ररहित और नहीं छेद करने योग्य, अस्नाविरम्=नाड़ी आदि के साथ सम्बन्धरूप बन्धन से रहित, शुद्धम्= अविद्यादि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र और अपापविद्धम्= जो पापयुक्त, पापकारी और पाप में प्रीति करने वाला कभी नहीं होता, परि,अगात्= सब ओर से व्याप्त जो, कवि:= सर्वज्ञ, मनीषी= सब जीवों के मनों की वृत्तियों को जानने वाला, परिभू:= दुष्ट पापियों का तिरस्कार करनेवाला और स्वयम्भू:= अनादि स्वरूप जिसकी संयोग से उत्पत्ति, वियोग से विनाश, माता, पिता,

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

गर्भवास, जन्म, वृद्धि और मरण नहीं होते वह परमात्मा,शाश्वतीभ्य:= सनातन अनादि स्वरूप अपने अपने स्वरूप से उत्पत्ति और विनाश रहित, समाभ्य:= प्रजाओं के लिये, याथातथ्यत:= यथार्थभाव से, अर्थान्= वेद द्वारा सब पदार्थों को, व्यदधात्=विशेष कर बनाता है, स:= वही परमेश्वर तुम लोगों को उपासना करने योग्य है।

तात्पर्य हुआ जो नित्य वस्तु है उसके नाम, गुण और कर्म भी नित्य ही हैं, क्योंकि उनका आधार नित्य है। और बिना आधार के नाम, गुण और कर्मादि स्थिर नहीं हो सकते, क्योंकि वे द्रव्यों के आश्रय सदा रहते हैं। जो अनित्य वस्तु है उसके नाम, गुण और कर्म भी अनित्य होते हैं। इसलिये परमेश्वर नित्य है और उसका ज्ञान भी नित्य है, ऐसा जानना ही उचित है। वेदों के नित्यत्व में ऋग्वेद में भी कहा है–

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।।[2]

अर्थात् जिस प्रकार इस सृष्टि में शब्द, अक्षर, अर्थ और सम्बन्ध वेदों में है, उसी प्रकार से पूर्व कल्प में भी थे और आगे भी रहेंगे। क्योंकि जो ईश्वर की विद्या है वह नित्य है। ईश्वर की विद्या वेद है, इसलिये वेद भी नित्य है। दर्शनानुसार वेदनित्यत्त्व दर्शन छ: हैं। नाम हैं–

कपिल प्रणीत- सांख्य दर्शन

पतंजलि प्रणीत- योग दर्शन

गौतम प्रणीत- न्याय दर्शन

कणाद प्रणीत- वैशेषिक दर्शन

जैमिनि प्रणीत- मीमांसा दर्शन

बादरायण प्रणीत- वेदान्त दर्शन

दर्शनों में भी शब्द के नित्यत्व होने की जो शंका है, उसका निवारण किया है।

सांख्य आदि 6 दर्शन में वेदनित्यत्त्व सांख्य दर्शन के प्रणेता कपिल ऋषि ईश्वरोक्त वेदविद्या को नित्य प्रमाणित करते हुये लिखते हैं–

'निजशक्त्यभिव्यक्ते: स्वत: प्रामाण्यम्'।[3]

निजशक्त्यभिव्यक्ते:= वेद के शब्द, अपनी स्वाभाविक शक्ति से अर्थ बोधन करते हैं। अत: स्वत: प्रामाण्यम्= वेद स्वत: प्रामाण्य है। अर्थात् परमेश्वर की निज अर्थात् स्वाभाविक जो विद्याशक्ति है, उससे प्रकट होने से वेदों का नित्यत्व और स्वत: प्रमाण सब मनुष्यों को जानना चाहिये। इसलिये उसके स्वत: प्रामाण्य का यही मूल आधार है, फलत: यदि वेद के शब्द की अर्थ बोधन शक्ति का हमें ज्ञान है, तो उससे हमें जिस अर्थ का बोध होगा उसके प्रामाण्य के लिये किसी अन्य साधन की अपेक्षा नहीं है।

मनुष्य में स्वाभाविक ज्ञान शक्ति होती है, उसके आधार पर वह धीरे धीरे उन्नति करता हुआ ज्ञान प्राप्त करता है। परन्तु नैमित्तिक ज्ञानशक्ति के बिना कोई भी मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता। अत एव सृष्टि के आदि में परमेश्वर वेद के रूप में

नैमित्तिक ज्ञान देता है। यह वही ज्ञान है जो प्रलय काल में भी उसके ज्ञान में बना रहता है। इसी नित्यत्त्व को प्रमाणित करते हुये पतंजलि मुनि योगदर्शन में निर्वचन करते हैं–

'स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्'।।[4]

पूर्वेषाम्= पहलों का, अपि= भी, गुरुः= गुरु है (उपदेष्टा है, वह ईश्वर), कालेन= काल के द्वारा, अनवच्छेदात्= अनवच्छिन्न– सीमित न होने के कारण।

अर्थात् अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा और ब्रह्मादि पुरुष सृष्टि के आदि में उत्पन्न हुये थे, उनसे लेकर हम लोग पर्यन्त और हमसे आगे जो होने वाले हैं, इन सबका गुरु ब्रह्म ही है। ब्रह्म नित्य है। उसका ज्ञान भी नित्य और एकरस है। प्रलय सृष्टि का होता है, ब्रह्म का नहीं। ईश्वर का ज्ञान उसके साथ बना रहता है। आदि काल में जब सर्वप्रथम मानव का आविर्भाव हुआ, तो उसके पथप्रदर्शन के लिये आवश्यक सब ज्ञान परमगुरु परमात्मा ने उसके आत्मा में स्फुरित किया, परमात्मा के नित्य होने से उसके द्वारा प्रदत्त ज्ञान भी नित्य ही है। योगदर्शन के भाष्यकार व्यासमुनितस्य वाचकः प्रणवः की व्याख्या करते हुये लिखते हैं– **''सर्गान्तरेष्वपि वाच्यवाचकशक्त्यपेक्षस्तथैव संकेतः क्रियते''। ''सम्प्रतिपत्तिनित्यतया नित्यः, शब्दार्थसम्बन्धः''।।**

अर्थात् प्रत्येक सर्ग में उसी वाच्यवाचकशक्ति के आधार पर संकेत किया जाता है। अतः न केवल वेद नित्य है, अपितु ज्ञान की नित्यता से शब्दार्थता का सम्बन्ध भी नित्य है। इसलिये सब मनुष्यों को यही मानना उचित है कि ईश्वर के नित्य होने से वेद भी नित्य हैं।

इसी प्रकार न्यायदर्शन में गौतम मुनि ने वेद नित्य हैं, इसका समर्थन करते हुये कहा है– **'मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात्'**।[5]

अर्थात् मन्त्र तथा आयुर्वेद के समान आप्तोक्त होने से वेद प्रमाण है। इसका भाष्य करते हुये वात्स्यायन मुनि ने लिखा है– जैसे यथायोग्य अर्थ का प्रतिपादक होने से आप्त पुरुषों ने मन्त्रायुर्वेद को प्रमाण माना है और उनके प्रमाण करने से प्राकृत जन भी उसको मानते हैं। इसी प्रकार वेद भी प्रामाणिक मानने चाहिये। जैसे सृष्टि के आरम्भ में अग्नि आदि ऋषियों द्वारा ऋगादि चारों वेदों का ईश्वर की ओर से प्रकाश होने के कारण चारों वेद ईश्वर की वाणी कहलाते हैं। और सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् ईश्वर प्राणी मात्र का हितैषी होने से परम आप्त है। इसीलिये उसके उपदेश कदापि मिथ्या न होने से निर्भ्रान्त स्वतः प्रमाण हैं। जो आप्तोक्त होता है वह प्रमाण होता है। इस व्याप्ति नियम के अनुसार जिस प्रकार आप्तोक्त होने से मन्त्रायुर्वेद सत्यार्थ का प्रतिपादक है। वैसे ही वेद भी परमेश्वर का वचन होने से स्वतः प्रमाण है। न्यायभाष्यकार कहते हैं–

''मन्वन्तरयुगान्तरेषु चातीतानागतेषु सम्प्रदायाभ्यासप्रयोगाविच्छेदो वेदानां नित्यत्वम्''।

अर्थात् अतीत या अनागत मन्वन्तर वा युगान्तरों से वेद अविच्छिन्न चले आ रहे हैं। अतः वेद नित्य हैं।

वैशेषिक दर्शन के प्रणेता कणाद मुनि वेदनित्यत्व में प्रमाण लिखते हैं–

'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्'।[6]

तद्वचनात्= ईश्वर का वचन होने से, आम्नायस्य= वेद, प्रामाण्यम्= स्वत: प्रमाण है। अर्थात् वेदईश्वरोक्त है,इनमें सत्यविद्या और पक्षपात रहित धर्म का ही प्रतिपादन है, इससे चारों वेद नित्य हैं। वैशेषिक दर्शन में आगे कहा है– 'सदकारणवन्नित्यम्'।[7]

सद्= भावरूप, अकारणवत्= कारण से रहित जो, नित्यम्= नित्य पदार्थ है, वही जगत् का मूल कारण है। अर्थात् परमात्मा के नित्य होने से उसका ज्ञान भी नित्य हुआ। मीमांसा दर्शन में भी वेद को शब्द नाम से जाना गया है। वेद में जो शब्द हैं, वे नित्य हैं। सूत्र है–

'नित्यस्तु स्याद्दर्शनस्य परार्थत्वात्'।[8]

नित्य:= शब्द नित्य, स्यात्= है, तु= अनित्य नहीं, क्योंकि दर्शनस्य= उसका उच्चारण, परार्थत्वात्= श्रोता के अर्थ ज्ञान के लिये है। श्रोता को अर्थ का ज्ञान होना शब्द के उच्चारण का फल है अर्थात् अर्थ के ज्ञान का कारण शब्द है। और कार्यकाल में कारण का होना आवश्यक है, यदि शब्द को अनित्य माना जाय, तो ठीक नहीं। क्योंकि वह कार्य की उत्पत्ति काल तक नहीं रहता। अर्थात् गकार, औकार, विसर्ग इन तीनों के मिलने से गौ: शब्द बनता है। जिससे श्रोता को गोत्व और उसके आश्रय व्यक्ति का ज्ञान होता है, और शब्द को अनित्य मानने से औकार के उच्चारण काल में गकार और विसर्ग के उच्चारण काल में औकार नहीं रह सकता, उसके न रहने से अर्थ का ज्ञान होना असम्भव है, परन्तु होता है। इसलिये शब्द नित्य है। अर्थात् शब्द नित्य ही हैं। क्योंकि उच्चारण क्रिया से जो शब्द का श्रवण होता है, वह अर्थ जानने के लिये है। इससे शब्द अनित्य नहीं हो सकते। इसी नित्यत्त्व को प्रमाणित करते हुये वेदान्तदर्शन में कहा है–

शास्त्रयोनित्वात्।।[9] शास्त्रयोनित्वात्= ब्रह्म ऋग्वेदादि शास्त्र का रचयिता होने से जगत् का निमित्त कारण है। इसकी पुष्टि में शंकराचार्य भी लिखते हैं–

ऋग्वेदादि जो चारों वेद हैं, वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं, सूर्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं, उनका बनाने वाला सर्वज्ञादि गुणों से युक्त परब्रह्म है, क्योंकि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव सर्वज्ञ गुणयुक्त इन वेदों को बना सके, ऐसा सम्भव कभी नहीं हो सकता। किन्तु वेदार्थ विस्तार के लिये किसी जीव- विशेष पुरुष से अन्य शास्त्र बनाने का सम्भव होता है। इसी को स्पष्ट करते हुये वेदान्तदर्शन में एक अन्य सूत्र है–

अत एव च नित्यत्वम्।[10] च= और, अत:, एव= प्राकृत पुरुष कर्ता न होने के कारण नित्यत्वम्= वेद नित्य है।

जिस प्रकार महाभारत आदि के कर्ता व्यास आदि अपने ग्रन्थों की रचना में स्वतन्त्र हैं, इसी प्रकार वेद का कर्ता कोई पुरुष नहीं, उसका उपदेष्टा परमेश्वर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् है। और वह पूर्व कल्प के अनुसार ही वेद का उपदेश करता है, अन्यथा नहीं। तात्पर्य यह है कि वैदिक शब्दार्थ सम्बन्ध का क्रमविशेष जैसा पूर्व कल्प में था, वैसा ही अब है, वैसा ही भविष्य कल्प में ज्यों का त्यों बना रहेगा।

अर्थात् ब्रह्म समस्त विश्व का अध्यक्ष है। जिस विश्व का वह अध्यक्ष है, वह जीवात्मा और प्रकृति के रूप में विद्यमान है। इसलिये ये तीनों नित्य ही हैं। परमात्मा का नित्यत्व प्रमाणित होने से उससे प्राप्त ज्ञान वेद भी नित्यत्व के प्रमाणभूत हैं। इस प्रकार से षड्दर्शनों से यह सिद्ध है कि ईश्वर एवं ईश्वर प्रदत्त ज्ञानरूपी वेद नित्य ही हैं।

व्याकरणशास्त्र में वेदनित्यत्व- शब्द वर्णों के समूह को कहते हैं, किसी शब्द में वर्णों की क्रमिकता हम बोलने के क्रम से जानते हैं। क्रम पूर्वक सुनने के पश्चात् अन्त में उस शब्द का अनुभव होता है। अत: शब्द के अनुभव में वर्णों की क्रमिकता आवश्यक है।

वेद शब्दरूप हैं। अत: वेद का नित्यत्व शब्द के नित्यत्व पर निर्भर करता है। शब्द को नित्यत्व बताते हुये महर्षि पतंजलि मुनि महाभाष्य में लिखते हैं–

नित्या: शब्दा: नित्येषु च शब्देषु कूटस्थैरविचालिभिर्वर्णैर्भवितव्यम्-

नपायोपजनविकारिभिरिति। श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्य: प्रयोगेणाभिज्वलित:। आकाशदेश: शब्द:।[11]

अर्थात् सब शब्द नित्य हैं क्योंकि शब्द वेद से निकले हैं। इन शब्दों में जितने अक्षरादि अवयव हैं, वे सब कूटस्थ और विचाररहित हैं। और वे पूर्वापर विचलते भी नहीं है। उनका अभाव व आगम कभी नहीं होता। तथा कान से सुनके जिसका ग्रहण होता है, बुद्धि से जो जाने जाते हैं, जो वाक् इन्द्रिय से उच्चारण करने से प्रकाशित होते हैं और जिनका निवास का स्थान आकाश है, उनको शब्द कहते हैं। इससे वैदिक अर्थात् जो वेद के शब्द और वेदों से जो शब्द लोक में आये हैं, वे लौकिक होते हैं। वे भी सब नित्य ही हैं। क्योंकि शब्द दो प्रकार का होता है।– नित्य कार्य। इनमें से जो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध परमेश्वर के ज्ञान में है, वे सब नित्य ही होते हैं। और जो हम लोगों की इच्छा से उत्पन्न होते हैं, वे कार्य होते हैं। क्योंकि जिसका ज्ञान और क्रिया स्वभाव से सिद्ध और अनादि है। उसका सब सामर्थ्य भी नित्य ही होता है। इससे वेद भी उसकी विद्यास्वरूप होने से नित्य ही है। क्योंकि नित्य ब्रह्म की विद्या कभी अनित्य नहीं हो सकती। इसलिये जितने वैदिक व लौकिक शब्द हैं, वे सब नित्य ही हैं।

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में वेदनित्यत्व- महर्षि दयानन्द सरस्वती ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के वेदनित्यत्वविचार में लिखते हैं– "अनित्यत्व की बात पुस्तक, पत्र, मसी और अक्षरों की बनावट आदि पक्ष में घटती है, तथा हम लोगों के क्रिया पक्ष में भी बन सकती है, किन्तु वेद पक्ष में नहीं घट सकती। क्योंकि वेद तो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध स्वरूप ही हैं, मसी, कागज, पत्र, पुस्तक और अक्षरों की बनावट स्वरूप नहीं है। यह जो मसी आदि द्रव्य और लेखनादि क्रिया है, सो वो मनुष्य की बनाई है। इससे यह अनित्य है। और ईश्वर के ज्ञान में सदा बने रहने से वेदों को हम लोग नित्य मानते हैं। क्योंकि सृष्टि के आदि में ईश्वर से वेदों की प्रसिद्धि होती है और प्रलय में जगत् के नहीं रहने से उनकी अप्रसिद्धि होती है, इस कारण से वेद नित्यस्वरूप ही बने रहते हैं।"[12] भारतीय मनीषा बिना किसी संकोच के वेदों को स्वत: नित्य स्वीकार करती है। जबकि अन्य सभी ग्रन्थों को अपने को प्रामाणिक करने के लिये अन्य ग्रन्थों की आवश्यकता होती है, परन्तु वेदों को नहीं।

सन्दर्भ –

1. यजु 40.8
2. ऋग्वेद
3. सांख्यदर्शन 5.5.1
4. योगदर्शन 1.26
5. न्यायदर्शन 2.1.69
6. वैशेषिकदर्शन 1.3
7. वैशेषिकदर्शन 4.1
8. मीमांसा दर्शन 1.1.18
9. वेदान्त दर्शन 1.1.3
10. वेदान्त दर्शन 1.3.29
11. महाभाष्यम्
12. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, स्वामी दयानन्द सरस्वती

अन्यसहायक ग्रन्थसूची–

13. सत्यार्थ प्रकाश, स्वामी दयानन्द सरस्वती
14. षड् दर्शन परिचय, डॉ सोमदेव शास्त्री